खंड: 5, अंक: 8 अगस्त 2022

संश्लेषण

सी जी एस मासिक पत्रिका

लोकलुभावानवाद: नीति बनाम राजनीति

सी जी एस
वैश्विक अध्ययन केंद्र
दिल्ली विश्वविद्यालय

मुख्य संपादक

प्रो सुनील कुमार चौधरी

संपादकीय मण्डल

डॉ रमेश भारद्वाज
डॉ संध्या वर्मा
डॉ महेश कौशिक

डॉ अभिषेक नाथ
डॉ आशीष कुमार शुक्ल
राम किशोर

©सीजीएस 2022

रूपांकन: काजल

संश्लेषण

लोकलुभावानवादः नीति बनाम राजनीति

अनुक्रमिका

संपादकीय

1. मुफ्तखोरी की कुसंस्कृतिः बहुपक्षीय दृष्टिकोण – पंकज 1–6
2. लोकलुभावनवादः भारत की चुनावी राजनीति का परिवर्तनीय परिप्रेक्ष्य – विकास यादव 7–10
3. मुफ्त की राजनीतिः प्रकृति, प्रवृति एवं संस्कृति – सृष्टि 11–13
4. प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतंत्र में लोकलुभावनवाद की राजनीतिः राजधानी दिल्ली के विशेष संदर्भ में – शंभू 14–18
5. आदिवासी जनजातिः लोकलुभावनवादी नीति और राजनीति – डॉ. चित्रा राजौरा 19–22

सम्पादकीय

वर्ष 2018 से हिन्दी प्रकाशन के क्षेत्र में अपनी मासिक पत्रिका, संश्लेषण के 49वें अंक को पाठकों के समक्ष प्रेषित करते हुए हमें एक बार पुनः हर्ष एवं उल्लास का अनुभव हो रहा है। अपनी विभिन्न गतिविधियों एवं कार्यों के माध्यम से वैश्विक अध्ययन केंद्र अकादमिक जगत से संबद्ध समस्त शोधार्थियों, शिक्षार्थियों एवं विद्यार्थियों के साथ एक अटूट संबंध बनाए रखने में सक्रियता व सराहनियता के साथ संकल्पित है। निरंतरता की इस कडी में संश्लेषण का यह अंश एक बार पुनः शोध के प्रति हमारी निष्ठा, गुणवता एवं प्रतिष्ठा का परिचायक है।

वर्ष 2022 का अगस्त माह भारत की चुनावी राजनीति के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण रहा है। राज्य विधानसभाओं के आगामी चुनावों की सरगर्मी के अंर्तगत राजनीतिक दलों ने अपने चुनावी वायदों एवं दावों से लोकलुभावनवाद की प्रवृति को एक बार पुनः जीवंत कर दिया। जहाँ एक ओर संघ सरकार अपनी नीतियों के माध्यम से जन कल्याण के अपने संकल्प को आम लाभार्थी तक पंहुचाने का प्रयास कर रही है वहीं कुछ राजनीतिक दलों एवं उनके राजनेताओं ने इन कल्याणकारी नीतियों को अपने वोट बैंक सुदृढोकरण का पर्याय बना दिया है। राजनीतिक जगत में लोकलुभावनवाद अथवा 'फ्रीबिज़' के रुप में प्रचलित मतदाताओं के लिए अल्पकालिक लाभ द्वारा अपने राजनीतिक स्वार्थपूर्ति का यह प्रयास नीति कम राजनीति अधिक प्रतीत होने लगा है।

भारत की समकालीन लोकतांत्रिक राजनीति का यह संवाद की आज के मतदाताओं को निशुल्क सेवाऐं चाहिए या नियमित सुविधाऐं वाद–विषय का एक नवीन पक्ष प्रस्तुत करता है। चुनावी लोकतंत्र की परिवर्तनीयता तथा विषय की समसामयिकता को ध्यान में रखते हुए केंद्र ने 'लोकलुभावनवादः नीति बनाम राजनीति' विषय पर लेख आमंत्रित किये। पाँच उत्कृष्ट लेखों को सम्पादकीय मंडल ने चयनित किया जो आप सभी के समक्ष एक प्रकाशित पत्रिका के रूप में उल्लेखित हो रहे हैं। ये समस्त लेख मौलिक होने के साथ–साथ स्वातन्त्र्योत्तर भारत के परिवर्तनीय आयामों को भी संबोधित करने का प्रयास कर रहे हैं। स्वतंत्र चिंतन पर आधारित लेखकों के विचार उनकी रचनात्मकता, सृजनात्मकता एवं मौलिकता को भी इंगित करते हैं।

प्रकाशित लेखों पर पाठकों की प्रतिक्रियाओं के आधार पर ही हम अपने आगामी समसामयिक अंकों में अत्याधिक गुणात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास करेंगे।

संपादक मंडल

बुधवार, 14 सितम्बर 2022

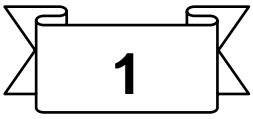

मुफ्तखोरी की कुसंस्कृतिः बहुपक्षीय दृष्टिकोण

पंकज

अतिथि सहायक प्राध्यापक, इन्द्रप्रस्थ महिला महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय

भारतीय चुनावी राजनीति की प्रतिस्पर्धात्मक व्यवस्था निरंतर अंतर्विरोध और जटिल प्रक्रिया से गुजर रही है। एक ओर इस प्रतिस्पर्धात्मक व्यवस्था ने दलों व मतदाताओं की सक्रिय भागीदारी से भारतीय राज्यव्यवस्था में लोकतांत्रिक मूल्यों को सशक्त किया है, वहीं इसी प्रतिस्पर्धात्मक व्यवस्था ने चुनाव को दल और मतदाताओं के लिए सत्ता प्राप्ति व व्यक्तिगत हितों की पूर्ति का साधन बनाकर इसके रूप को विकृत किया है। इस विकृतिकरण के कारण मुफ्तखोरी की संस्कृति को भारतीय राजनीति में बढ़ावा मिला है। मुफ्तखोरी पर आधारित लोकलुभावनवाद का आगमन कहीं न कहीं राज्य के कल्याणकारी स्वरूप के सीमित होने से भी जुड़ा हुआ है। 1990 के पश्चात भारतीय राज्य के द्वारा नव– उदारवादी नीतियों का अनुसरण करते हुए बाजार उन्मुखता पर आधारित प्रतिस्पर्धात्मक आर्थिक व्यवस्था का अनुसरण किया गया। जिसका उद्देश्य राज्य की कार्यशैली में निष्पक्षता, पारदर्शिता और कार्यकुशलता लाने पर केंद्रित था। परंतु इससे राज्य के लोक कल्याणकारी स्वरूप का सीमित होना स्वाभाविक था। कल्याणकारी राज्य के सीमित होने का लाभ राजनीतिक दलों और नेताओं के द्वारा आर्थिक लोकलुभावनवाद को बढ़ावा देने के लिए प्रयोग किया गया। जिसमें चुनाव पूर्व मतदाताओं को तात्कालिक व सीमित हितों पर आधारित नीतियों को अपनाया गया। जिसमें किसानों की ऋण माफी, टीवी और लैपटॉप वितरण, मुफ्त बिजली– पानी और परिवहन सेवा आदि शामिल है। जिससे राजनीतिक दलों के सत्ता प्राप्ति हितों की पूर्ति तो हो गई, परंतु दीर्घकालीन नीतियां, लोक कल्याणकारी सेवाओं और राज्य के आर्थिक हित प्रभावित हुए। इसलिए मुफ्तखोरी की क़संस्कृति वर्तमानकालीन भारतीय राजनीति में विवाद का विषय बनी हुई है। एक ओर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इसे ष्रेवड़ी कल्चरष से जोड़कर इसकी सामाजिक और आर्थिक परिप्रेक्ष्य में आलोचना की है , वहीं कुछ दलों विशेषकर आम आदमी पार्टी के द्वारा इसे कल्याणकारी और निर्धन हितैषी नीतियों से जोड़कर प्रस्तुत किया रहा है। इसी तरह विभिन्न संस्थाओं जैसे भारतीय रिजर्व बैंक, उच्चतम न्यायालय और भारतीय निर्वाचन आयोग के द्वारा भी अव्यवहारिक चुनावी वायदों और मुफ्तखोरी पर अपनी चिंता व्यक्त की है। मुफ्तखोरी पर आधारित लोकलुभावनवाद को व्यापक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण किया जाए तो तीन दृष्टिकोण महत्वपूर्ण

है। प्रथम विशेषज्ञ उन्मुख दृष्टिकोण, द्वितीय स्थापित व्यवस्था विरोधी दृष्टिकोण और अंतिम रचनात्मक दृष्टिकोण।

इन सभी दृष्टिकोण ओं का क्रमानुसार विवरण इस प्रकार हैः–

विशेषज्ञ उन्मुख दृष्टिकोण

विशेषज्ञ उन्मुखी दृष्टिकोण में मुख्यतः तीन विचार महत्वपूर्ण है। प्रथम, मुफ्तखोरी की संस्कृति के कारण देश की वित्तीय व्यवस्था में अस्थायित्व उत्पन्न होता है। भारतीय रिजर्व बैंक के द्वारा मुफ्तखोरी की कुसंस्कृति पर चिंता जताते हुए कहा है कि मुफ्त बिजली, मुफ्त सार्वजनिक परिवहन, लंबित बिजली बिल की माफी और ऋण माफी एक ओर प्रत्यय ऋण व्यवस्था को प्रभावित करते हैं, वहीं दूसरी ओर निजी निवेश को होत्साहित करते हैं। क्योंकि इससे श्रम शक्ति की भागीदारी में गिरावट आती है, जिससे श्रम दर में वृद्धि होती है। जिसके परिणामस्वरूप उत्पादन की दर और गुणवत्ता दोनों प्रभावित होती हैं। द्वितीय, मुफ्तखोरी पर आधारित लोकलुभावनवाद की नीति के कारण जहां मतदाताओं के अल्पकालीन हितों की पूर्ति तो हो जाती है, परंतु दीर्घकालीन हित जैसे कि उच्च गुणवत्ता की स्वास्थ्य सुविधाएं, शिक्षा सेवा आर सड़क निर्माण आदि आधारभूत ढांचे के विकास की अनदेखी होती है। जिससे राज्य की भविष्यकालीन विकास की स्थिति दिशाहीन हो जाती है। कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि दीर्घकालीन ढांचागत विकास के अभाव में एक ओर राज्य की विकास दर प्रभावित होती है, वहीं इसके साथ ही राज्य की अर्थव्यवस्था रोजगार उत्पन्न करने की क्षमता खो देती है। ऐसी स्थिति में राज्य पर बेरोजगारी भत्ता आदि लोकलुभावन नीति का अनुसरण करके अतिरिक्त वित्तीय भार बढ़ सकता है। जिससे राज्य की वित्तीय व्यवस्था के साथ–साथ राजनीतिक व्यवस्था भी धराशायी हो सकती है।

तृतीय, कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि भारतीय चुनावी राजनीति की प्रतिस्पर्धात्मक व्यवस्था प्रतिरोधात्मक व्यवस्था में परिवर्तित हो गई है। जिसमें विभिन्न दल और प्रत्याशी केवल तात्कालिक चुनावी सफलता के लिए चुनावी लोकलुभावनवाद का सहारा लेते हैं। केवल चुनावो लाभ केंद्रित इस नीति से न केवल चुनावी नियमों का अप्रत्यक्ष तौर पर उल्लंघन होता है, बल्कि लोकतांत्रिक मूल्यों के भी विरुद्ध है। क्योंकि इसमें मतदाता को एक नागरिक की भांति व्यवहार न करके उसे बाजार का एक ग्राहक समझा जाता है। जो नागरिक अभी तक भारतीय लोकतांत्रिक मूल्यों का संरक्षक रहा है उसे मुफ्तखोरी की कुसंस्कृति के माध्यम से ष्प्रयोग करो और फेंकने वाला ग्राहकष् बना दिया जाता है।

इस दृष्टिकोण की आलोचना इस आधार पर की जाती है कि इसमें केवल विशिष्ट वर्गीय विचारों और मूल्यों पर अत्याधिक ध्यान दिया जाता है, जबकि विशिष्ट वर्गों द्वारा किए गए भ्रष्टाचार और सुख सुविधाओं से ध्यान हटाने के लिए जनता के लोक कल्याणकारी सेवाओं को लोकलुभावनवाद से संबोधित किया जाता है।

स्थापित व्यवस्था विरोधी दृष्टिकोण

स्थापित व्यवस्था विरोधी दृष्टिकोण में मुख्यतः चार पक्ष महत्वपूर्ण ह। प्रथम, आम आदमी पार्टी दलीय विचारधारा और हितों को आगे बढ़ाने के लिए मुफ्तखोरी की कुसंस्कृति को लोक कल्याणकारी स्वरूप प्रदान करती है। इसलिए इस विचार का मानना है कि अभी तक भारतीय राजनीति के विशिष्ट वर्गीय केंद्रित रहा है। जिसमें उनकी सुविधाओं और स्वार्थपूर्ण जरूरतों के आधार पर वैधानिकता प्रदान की जाती है, जबकि आम जनमानस के प्रति लोक कल्याणकारी सेवाओं को लोकलुभावनवाद के आधार पर नामकरण करके स्थापित शोषणकारी व्यवस्था को स्थायित्व देने का प्रयास किया जाता है। द्वितीय, इस विचार का मानना है कि स्थापित व्यवस्था एक ओर बड़े पूंजीपतियों और उद्योगपतियों का ऋण माफ कर सकती है, तो आम जनता को मुफ्त सेवाएं देने पर क्यों प्रश्नचिन्ह लगाती है। इसके अलावा जहां एक ओर बड़े पूंजीपतियों की अनर्जक परिसंपत्ति में लगातार वृद्धि हो रही है, वही किसानों की बिजली और ऋण माफी को वित्तीय घाटे को बढ़ाने वाला कदम माना जाता है। इस दृष्टिकोण का मानना है कि स्थापित व्यवस्था की यह ष्दोहरी अभिवृत्तिष न केवल एक पक्षीय है, बल्कि व्यवस्था के स्थापित असंतुलन को बनाये रखने का प्रयास है। इस दृष्टिकोण के अनुसार वित्तीय घाटे की समस्या वास्तव में जनता की लोक कल्याणकारी सेवाओं को समाप्त करके नहीं, बल्कि विशिष्ट वर्गों के भ्रष्टाचार को खत्म करके समाप्त की जा सकती है। संक्षिप्त में, वित्तीय समस्याओं का हल लोक कल्याणकारी सेवा पर अंकुश लगाकर नहीं, बल्कि भ्रष्टाचार का अंत करके किया जा सकता है।

अतरू स्थापित व्यवस्था विरोधी दृष्टिकोण एक ओर सेवाओं को अधिक से अधिक मुक्त और सार्वभौमिकरण करने के पक्ष में है, जबकि दूसरी ओर क्रांतिकारी शैली को अपनाते हुए विशिष्ट वर्गीय विचारों, मूल्यों और नीतियों का विरोध करता है। इसके साथ ही भ्रष्टाचार को मुद्दा बनाकर वित्तीय प्रबंधन से संबंधित प्रश्नों को नकारने का प्रयास करता है। परंतु व्यापक और विस्तारित परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो इस दृष्टिकोण के विचारों में क्रांतिकारी शैली को अपनाया गया है, जबकि लोकतांत्रिक व्यवस्था में सुधारात्मक कार्यशैली से अधिक रचनात्मक कार्य संपन्न होते हैं। लोक कल्याणकारी नीतियों का सार्वभौमीकरण करना न्याय के सिद्धांत के विरुद्ध होने के साथ–साथ तर्कहीन भी है। भ्रष्टाचार केवल विशिष्ट वर्ग से ही संचालित कृत्य नहीं है, बल्कि भारतीय समाज

की मनोवृति का भी अंग बन चुका है और इस मनोवृत्ति को नागरिक को जागरुक कर के ही समाप्त किया जा सकता है। इसके अलावा भ्रष्टाचार का मुद्दा वित्तीय प्रबंधन का स्थान नहीं ले सकता है। अंतिम इस दृष्टिकोण को बढ़ावा देने वाले दल आम आदमी पार्टी स्वयं दोहरी मनोवृति से ग्रस्त हो चुकी है। एक ओर भ्रष्टाचार को मुद्दा बनाया जाता ह, वहीं दूसरी ओर ष्मनी लॉन्ड्रिंगष और ष्मदिरा नीतिष में हुए भ्रष्टाचार में दल के उच्च नेतृत्व के शामिल होने के आरोप लगते हैं।

रचनात्मक दृष्टिकोण

रचनात्मक दृष्टिकोण पूर्व के दोनों दृष्टिकोण के अतिवादी विचारों का विकल्प प्रस्तुत करता है। जिसकी प्रमुख विशेषता इस प्रकार है। प्रथम, किसी भी योजना, नीति और कार्यनीति को लागू करने से पूर्व उसके प्रभाव का आंकलन करना आवश्यक है। प्रभाव से अभिप्राय यह है कि कोई भी जनहित नीति या योजना को लागू किया जाए तो उसके समाज और अर्थव्यवस्था पर होने वाले भविष्यकालीन प्रभाव का अनुमान लगा लेना चाहिए। मुफ्त की सेवाएं जैसे मुफ्त बिजली, मुफ्त सार्वजनिक परिवहन आदि का राज्य की राजस्व व्यवस्था प्रबंधन के अनुसार होना चाहिए। ऐसी स्थिति उत्पन्न नहीं होनी चाहिए कि सेवाओं की गुणवत्ता प्रभावित हो। द्वितीय, इस दृष्टिकोण का मानना है कि मुफ्तखोरी की कुसंस्कृति में न केवल न्याय के सिद्धांत के विपरीत है, बल्कि व्यवहारिकता के नियम का भी उल्लंघन करती है। उदाहरण के लिए दिल्ली सरकार की महिलाओं के लिए मुफ्त सार्वजनिक परिवहन सेवा एक धनाढ्य और निर्धन महिला में कोई अंतर नहीं करती है। इसके साथ ही परिवहन विभाग के वित्तीय घाटा और सेवाओं में गुणात्मक सुधार के तथ्यों को भी अनदेखा किया जाता है। इसीलिए रचनात्मक दृष्टिकोण का मानना है कि लोक कल्याणकारी नीतियों के लागू करने के लिए व्यवहारिकता पर आधारित नियमों का पालन किया जाना चाहिए।

तृतीय, विस्तृत परिप्रेक्ष्य में रचनात्मक दृष्टिकोण का विश्लेषण करने के पश्चात यह ज्ञात होता है कि यह दृष्टिकोण मुफ्तखोरी की कुसंस्कृति को लोक कल्याणकारी नीति नामकरण के विरोध है। लोक कल्याणकारी नीतियों का उद्देश्य किसी लक्षित वर्ग पर केंद्रित होती हैं। जैसे भारत सरकार की ष्अंत्योदय अन्न योजनाष देश के निर्धन वर्ग के लिए न्यूनतम दरों पर अन्न उपलब्ध करवाती है। इसके विपरीत मुफ्तखोरी की योजना में तर्कहीन मापन शैली को अपनाया जाता है। जैसे दिल्ली और पंजाब सरकार की 200 यूनिट मुफ्त बिजली योजना इसमे प्रमुख है। बिजली की खपत को कम दिखाने के लिए ज्यादातर उपभोक्ताओं ने एक ही परिवार के अन्य सदस्यों के नाम पर भी बिजली मीटर लगवा है। जिससे इस योजना का दुरुपयोग होता है। इसके अलावा लोक कल्याणकारी योजना का उद्देश्य दीर्घकालीन और समग्र होता है। जैसे भारत सरकार द्वारा करोना काल में आर्थिक रूप से कमजोर वगों के लिए ष्प्रधानमंत्री गरीब कल्याण योजनाष की शुरुआत की गई।

जिसका उद्देश्य इस कालखंड में निर्धन परिवारों को भुखमरी और कुपोषण से बचाना था। ताकि सामान्य अवधि आने तक यह श्रम शक्ति सुरक्षित रहे। वहीं दूसरी ओर मुफ्तखोरी की योजना का उद्देश्य संकीर्ण, अल्पकालीन और लोकलुभावनवाद मानसिकता पर आधारित होता है। उदाहरण उदाहरण के लिए उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव 2022 से पूर्व समाजवादी पार्टी के द्वारा सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारियों के लिए पुरानी पेंशन व्यवस्था को लागू करने का वायदा किया गया था। चतुर्थ, रचनात्मक दृष्टिकोण के अनुसार योजना का आधार सार्वभौमिकता पर आधारित नहीं होना चाहिए, बल्कि समाज के उपेक्षित वर्ग को ध्यान में रखकर लागू किया जाना चाहिए। तभी उपरोक्त योजना कल्याणकारी पैमाने पर खरी उतर सकती है। परिप्रेक्ष्य में रचनात्मक दृष्टिकोण का विश्लेषण किया जाए तो इसका उद्देश्य ऐसी योजनाओं और नीतियों को बढ़ावा देना है जो समाज, अर्थव्यवस्था और राजनीति में समग्रता समता और समरसता स्थापित कर सकें।

मूल्यांकन

भारतीय लोकतंत्र की प्रतिस्पर्धात्मक व्यवस्था को भविष्यकालीन बनाने के लिए आवश्यक है कि भारतीय मतदाता को अपनी उपभोक्तावादी प्रवृत्ति को परिवर्तित करे। किसी भी देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था में मतदाता एक महत्वपूर्ण आधार स्तंभ होता है। इसलिए भारतीय मतदाता को अपनी उपभोक्ताओं को परिवर्तित करते हुए रचनात्मक दृष्टिकोण को अपनाने की आवश्यकता है। जिससे एक ओर लोकलुभावनवाद पर आधारित मुफ्तखोरी की कुसंस्कृति पर रोक लगेगी, वहीं दूसरी ओर लोकतांत्रिक व्यवस्था शत–शत होगी।

संदर्भ सूची

- Aravind, Indulekha (2022). The freebies debate: Genesis, definition and impact on welfare & economy. *The Economic Times*.
- Perumal, Prashanth (2022). Should there be limits on 'freebies'*?. The Hindu*.
- Shah, Neha and Shah, Atman (2022). On freebies: We are asking the wrong questions. *The Indian Express*.
- Quraishi, S Y (2022). Revdi culture debate: Why we need freebies in India. *The Indian Express*.
- India Today Web Desk (2022). Revdi culture: PM Modi warns against electoral freebies at Bundelkhand expressway launch.
- Express News Service (2022). Freebie politics row: AAP begins online campaign seeking support for 'Bharatvaad' instead of 'BJP's dostvaad'.

♦♦♦♦♦

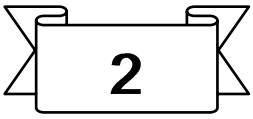

लोकलुभावनवादः भारत की चुनावी राजनीति का परिवर्तनीय परिप्रेक्ष्य

विकास यादव

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

पिछले कुछ दशकों में विभिन्न लोकतंत्रों की चुनावी प्रक्रिया में लोकलुभावनवाद शब्द ने प्रमुखता प्राप्त की है। इसलिए लोकलुभावनवाद शब्द को समझना महत्वपूर्ण है। राजनीतिक दलों द्वारा आम जनता से जुड़ने के नीतिगत प्रचार एवं प्रयास के संदर्भ मै लोकलुभावनवाद का विश्लेषण करना आवश्यक है। 'एर्नेस्ट लैकलाऊ' (Argentine Philoshoper) ने इस संदर्भ मे समतुल्यता की श्रंखला (Chain of equivalence) के बारे मे बात की है जिसमे की लोकलुभावनवाद को विषम समूह की मांगों के एकत्रीकरण के रूप परिभाषित किया है। ये वो मांगें है जो सरकारों द्वारा नीतिगत कार्यो में परिणत होती है, ये नीतिया न केवल लोगो की मांग का प्रतिनिधित्व करती है परंतु लोगों की प्रभावी भागीदारी का भी एक संकेत देती है। इसलिए लोकलुभावन नीतियों को यदि समझा जाये तो यह कहा जा सकता है कि ये वो नीतियां है जो कि कुछ वर्गो एवं समुदायों के हितों की पूर्ति एवं उनकी सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों में सुधार हेतु विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा लायी जाती है। ये वो नीतियां होती है जो सिर्फ कुछ समय हेतु ही लायी जाती है जिनको अल्पकालिक नीतियों (Short term policies) के संदर्भ मे समझा जा सकता है जो की राजनीतिक दलों द्वारा समाज के विभिन्न वर्गों से आने वाले लोगों को कुछ समय हेतु राहत देने के उद्देश्य से लायी जाती है, जिसको अल्पकालिक तत्काल समाधान (Short term immediate solution) कहा जाता है, उदाहरण के लिए देखा जा सकता है कि कैसे भारतीय राजनीति मे इन नीतियों का प्रभाव प्रदर्शित होता है। विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा बार–बार बिजली एवं पानी को फ्री करना, कृषि ऋण माफी की पहल करना, सार्वजनिक परिवहनों मे महिलाओं के सफर को फ्री करना के साथ–साथ ऐसी कई नीतियों को देखा जा सकता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि ये सब मुद्दे निर्धनता एवं संसाधनों की कमी के लक्षण है न कि स्वयं वास्तविक समस्याओं के।

अतः लोकलुभावनवाद को दो दृष्टिकोणों से समझा जा सकता है। पहले दृष्टिकोण मे लोकलुभावनवाद को कुछ इस प्रकार समझा जा सकता है कि यदि सरकार का दृष्टिकोण समाज के बड़े कल्याण की ओर अधिक केंद्रित है और यदि कल्यानवाद (Welfarism) को एक नीति के

रूप मे देखा जाता है, तो यह देखा जा सकता है कि यह शासन (Governance) की और अधिक उन्मुख है क्योंकि इसका परिणाम यह रहता है कि इसके अंतर्गत समाज के सभी वर्ग लाभान्वित होते है। दूसरे दृष्टिकोण के तहत लोकलुभावनवाद को कुछ इस प्रकार समझा जा सकता है कि यदि सरकारों द्वारा कल्याणवाद के दृष्टिकोण को कुछ राजनीतिक लाभ हेतु अधिक प्रयोग किया जाता है, तो यह देखा जा सकता है कि सरकार के दृष्टिकोण मे लोकलुभावनवाद उपस्थित है क्योंकि यहाँ केवल विशिष्ट वर्ग जैसे कि निम्न वर्ग, निर्धन वर्ग, इत्यादि से संबंध मे नीतियों का निर्माण राजनीतिक दलों द्वारा किया जाता है जिससे कि उनको राजनीतिक लाभ हो सके। इस प्रकार लोकलुभावनवाद को एक राजनीतिक रणनीति के रूप मे देखा जा सकता है जिससे कि राजनीतिक दल लोगों को अपनी तरफ जोड़ सके।

लोकलुभावनवाद को प्रभावी लामबंदी के लिए एक चुनावी रणनीति के रूप में भी समझा जा सकता है, जैसे कि इंदिरा गांधी द्वारा निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रमों से भारत में इस रणनीति का उपयोग किया गया जिससे की उन्हें एक वक्तव्य से जोड़ा गया यह प्रमुख वक्तव्य था भारत इंदिरा है (India is Indira), दक्षिण भारत में राज्यों सरकारों द्वारा अम्मा कैंटीन जैसी पहल करना, इस प्रकार की विभिन्न नीतियों से यह समझा जा सकता है कि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भी भारतीय राजनीति में लोकलुभावनवाद को देखा जा सकता है। तथापि, आम आदमी पार्टी के उदय के पश्चात लोकलुभावनवाद भारतीय राजनीति मै अधिक प्रचलित हुआ, क्योंकि आम आदमी पार्टी को लोकलुभावन पार्टी के संदर्भ में देखा जा रहा है। आम आदमी पार्टी का भ्रष्टाचार विरोधी आंदालन से उभरना, अरविंद केजरीवाल का करिश्माई नेतृत्व, पार्टी की ओर से मुक्त बिजली, पानी, महिलाओं के लिए मुक्त परिवहन सेवाएं इत्यादि नीतियों ने यह इंगित किया है कि यह पार्टी कुछ खास वर्गो को लक्षित करके एवं उनके लिए नीतियों को बनाकर एक तरह से लोकलुभावन दल क रूप में सबका ध्यान आकर्षित किया है।

एक मत्वपूर्ण तथ्य यह है, जिसे समझना आवश्यक है कि लोगों द्वारा विधिवत तरीके से चुनी हुई सरकारों के शासन की, क्योंकि लोगों और उनके प्रतिनिधियों के मध्य संबंध लोकतंत्र में एक पूरक की भूमिका निभाते है। इस अनूठे संबंध को सुदृढ़ करने हेतु राजनीतिक दलों और सरकारों द्वारा विभिन्न रणनीतियों, शासन के मॉडलो इत्यादि के द्वारा मतदाताओं से वैधता प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि लोकलुभावन नीतियों द्वारा कैसे राजनीतिक दल मतदाताओं का समर्पण अपनी और करने का प्रयास करते है। अतः इस संदर्भ में मतदाता एक अहम भूमिका में हो जाता है, इसलिए मतदाता लोकतांत्रिक राजनीति में तीन अलग–अलग रूपों में वास्तवि गेम चेंजर बन गये हैं, अर्थात मतदाता को कस्टमर्स (Customer), कंज्यूमर्स

(Consumer), और क्लाइंट (Client) के तीन विभिन्न रूपों में देखा जा सकता है, जहां राजनीतिक दल विभिन्न प्रकार से इनसे जुड़ने का प्रयास करते है और उनका वोट पाने हेतु प्रतिस्पर्धी चुनावी वातावरण में उनको मनाने का प्रयास करते है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि भारतीय चुनावी राजनीति की प्रकृति एवं प्रवृति परिवर्तित हुई प्रदर्शित होती है, प्रतिस्पर्धी चुनावी राजनीति एवं राजनीतिक दलों में समकालीन समय में नए विकास देखे जा सकते है जहां पर राजनीतिक दलों की संस्कृति भी परिवर्तित एवं परिणित होती प्रदर्शित होती है। अब मतदाताओं की भूमिका भी लोकतंत्र को सुचारू रूप से चलाने हेतु और अधिक परिवर्तित होती प्रदर्शित होती है। एक महत्वपूर्ण आवश्यकता जो एक संसदीय लोकतंत्र के परिवेश के लिए केंद्रीय बिंदु है वह है कि राजनीतिक दल या सरकारों द्वारा निःशुल्क सेवाओं के स्थान पर कहीं न कहीं नियमित सेवाओं पर अधिक बल देना लोकतंत्र के लिए अधिक आवश्यक है। सरकारों को लोकलुभावन नीतियों एवं मुफ्त की राजनीति के स्थान पर लोककल्याणकारी नीतियों पर अधिक बल देने की आवश्यकता है जिससे कि उसके सकारात्मक परिणाम हो। सरकारों का उद्देश्य लोगों को अच्छी शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य इत्यादि देने का होना चाहिए जिससे कि समाज में सभी वर्गों का कल्याण हो।

संदर्भ–सूचीः

Aiyar, Yamini [2022] August 9, [Freebie subsidy] compensation: let's reset the terms of debate.

https://www-google-com/amp/s/indianeÛpres.

com/article/opinion/columns/freebie&subsidy&compensation&lets&reset&terms&debate&8078602/lite/

Choudhary] S.K. [2020], EÛ panding Politics] EÛ tending Democracy: Election 2019- DCRC globalense: Vol&2- No-1- pp-1&18

[2022] August 28], Freebies Culture and Economy- Sansad Tv- Retrieved from https://youtu-be/O9IV_XJ&RRI

♦♦♦♦♦

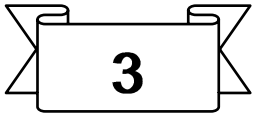

3

मुफ्त की राजनीतिः प्रकृति, प्रवृति एवं संस्कृति

सृष्टि

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

इस आलेख में शासन का मुफ्तीय प्रतिमान कितना सही है या नहीं इसके विभिन्न पहलुओं पर विवेचना की गई है। सुविधाओं के नाम पर राजनीतिक लाभ के लिए, जो मुफ्त की राजनीति की संस्कृति पनप रही है। वो कितना उचित है। श्रीलंका में मुफ्त की राजनीति के चलते आर्थिक संकट आ गया है। राज्यों पर बढ़ता कर्ज चिंता का विषय है। शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य व अस्पताल के विषय पर राज्य सरकार वायदा अधिक करती है। किन्तु उन सभी विषयों पर कार्य नहीं किया जाता है। क्योंकि जो धन है। उसका सही रूप से आवंटन नहीं किया जा रहा है।

बिजली, पानी व बस यात्रा मुफ्त करने से सरकारी खजाने पर भार बढ़ता है। और यह भार बाद में जनता पर ही आता है। यह मुफ्तीय प्रकृति कुछ राजनीतिक दलों के द्वारा अपनाई जाती रही है। परंतु पिछले कुछ वर्षों में अब राजनीतिक दलों द्वारा मुफ्तीय संस्कृति के रूप में परिणित हो गई है। यही कारण है कि राजनीतिक दल अपने जनाधार को बढ़ाने के लिए इस प्रकार की अल्पकालिक रणनीतियाँ {Short term Strategies} का प्रयोग करते है। और प्रयास करते है। कि इसके द्वारा उनका जनाधार बढ़ा रहे। उनका मुख्य तबका छोटे–छोटे वर्ग का जनाधार को राजनीतिक दल मुफ्त की राजनीति से बढ़ाने का प्रायस करते है।

सामान्य रूप से कुछ राजनीतिक दल द्वारा जैसे दिल्ली में पश्चिमी व दक्षिण भारत के राज्यों में कुछ राजनीतिक दलों द्वारा जनाधार बढ़ाने के लिए मुफ्तीय प्रतिमान का प्रयोग कर रहे है। और मुख्य रूप से राज्य दल से राष्ट्रीय दल के दर्जा को प्राप्त करने के लिए कर रहे है। क्योंकि जनाधार को बढ़ाने के लिए 6% मत यदि प्राप्त कर लेते है तो राज्य से राष्ट्रीय दलों का दजा प्राप्त कर लेंगे। अतः राजनीतिक दलों का मुख्य ध्यान उस निम्न वर्ग पर होता है। जो इसके द्वारा अधिक लाभान्वित होता है। और इसकी सबसे बड़ी हानि उन मध्य वर्ग व उच्च वर्गों को होता है। जिनके कर से सारा कार्य किया जाता है। शिक्षा, स्वास्थ्य, विकास, अधिसंरचना, अभिशासन व रोजगार जैसे विषयों पर मुफ्तीय संस्कृति अपनाई जा रही है। अतः इस विषय पर गंभीरता व गहनता से विचार–विमर्श करने की आवश्यकता है।

आरबीआई के प्रतिवेदन के अनुसार, 20 राज्य इस मुफ्तीय संस्कृति के कारण कर्ज के तले दबे हुए है। राज्यों के राजनीतिक लाभ के लिए मुफ्त की राजनीति देखने को मिलती है। वर्ल्ड बैंक कहता है कि दीर्घकालिक विकास के लिए पूंजी निवेश सही है। और सब्सिडी का प्रयोग आपातकाल में विशेष परिस्थिति में होना चाहिए उसको नीतिगत का भाग नहीं बनाया जा सकता है। अतः मुफ्त की रेवड़ी से विकास व अभिशासन का कार्य रुक सकता है। यह विकास के कार्य में बाधा सिद्ध होता है।

राज्य सरकार अपनी आधारिक जिम्मेदारियों से पीछे हटकर उन चीजों पर चले जाते है। जिन सभी चीजों को लोगों को दिखाना सरल हो जाता है। किन्तु ये सभी चीजें दीर्घकालिक लाभ में नहीं आती है। भारत का चुनावी लोकतंत्र का अलग चित्रण है लोकतंत्र में संख्या अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब अल्पकालिक रणनीतियाँ मुफ्तीय प्रकृति के द्वारा उदित की जाती है तो सामान्य मतदाता एक तथ्य से जागरूक नहीं होता है कि राज्य की आर्थिक स्थिति कैसी है, वो तो मात्र राजनीतिक दलों क द्वारा मुफ्तीय प्रकृति के वायदों से आकर्षित हो जाता है। और ऐसे वायदों राजनीतिक वर्ग का निम्न वर्ग का तबका अत्यधिक प्रभावित होता है।

राजनीतिक दलों द्वारा प्रयोग की गए मुफ्तीय वायदें अल्पकालिक रणनीतियों का भाग है, जो कि लोकलुभावनवाद को अग्रसर करते है। और दीर्घकालिक रणनीतियों से विकास की दिशा में कार्य किया जाता है, जो अभिशासन को दर्शाता है। भारत में प्रारम्भिक पहचान {Primordial Identities} जाति, वर्ग, समुदाय व वंश से तो बचा नहीं जा सकता है। किन्तु राजनीतिक दलों को शासन व अभिशासन के ग्राफ को थोड़ा ओर ऊपर लाने का प्रयास करना चाहिए। अतः गुणात्मक अभिशासन की ओर अग्रसर होना चाहिए।

प्रायः मतदाता को ओर अधिक जागरूक होने की आवश्यकता है कि अल्पकालिक रणनीतियाँ अधिक दीर्घ लाभ के साथ आगे नहीं बढ़ सकती है। इन राजनीतिक दलों पर चुनाव आयोग का भी शिकंजा होना चाहिए। और ऐसी आचार–संहिता होनी चाहिए, जो राजनीतिक उत्तरदायित्व के साथ–साथ आर्थिक जवाबदेही भी उपलब्ध कराई जानी चाहिए। जिससे कि इस प्रकार के कार्य जो भारत को चुनौती दे सकते है। ऐसे राजनीतिक दलों, राजनायिकों व राजनेताओं पर एक लोकतान्त्रिक दबाव, चुनाव आयोग का दबाव व जनता–जनार्धान का दबाव निरंतर बना रहना चाहिए।

कृषकों व निर्धनों के नाम पर आर्थिक सहायता अधिक दी जाती है। किन्तु आज भी भारत में कृषकों व निर्धनों की स्थिति अच्छी नहीं है। आर्थिक सहायता मुफ्तीय प्रकृति से भिन्न है। आर्थिक सहायता रणनीतियों का भाग नहीं, अपितु नीतियों का भाग होता है। नीतियों के आधार पर

तात्कालिक सहायता दी जाती है। जिससे कि अधिसंरचना विकसित हो सके। व कृषि को ठीक किया जा सके। तथा एक बड़े कृषक समुदाय को संबोधित कर सके। तो यह दीर्घ–कालिक समय में विकास की मुख्यधारा से जोड़ता है। और छोटे कृषकों को भी बड़े कृषकों के साथ कृषि क्षेत्र को औधोगिक क्षेत्र के मुख्यधारा में लाने का प्रयास करता है। तो इस प्रकार की आर्थिक सहायता यदि सरकार देती है तो राजनीतिक दलों को भी मुख्य चिंता को संबोधित करना चाहिए।

अतः कहा जा सकता है राजनीतिक दलों द्वारा अपने वोट बैंक को बनाए रखने के लिए मुफ्तीय प्रकृति का प्रयोग किया जात है, जो अब मुफ्तीय संस्कृति में परिवर्तित होती जा रही है। जो मात्र लोकलुभावनवाद को बढ़ावा देता है। राजनीतिक दलों को निशुल्क सुविधाओं के नाम पर नियमित सेवाओं को प्राथमिकता देनी चाहिए, जो विकास व अभिशासन को प्रेरित करता है।

♦♦♦♦♦

4

प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतंत्र में लोकलुभावनवाद की राजनीतिः राजधानी दिल्ली के विशेष संदर्भ में

शंभू

शोधार्थी, राजनीतिक विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतंत्र में कुलीन वर्ग का राज्य की शासन व्यवस्था पर नियंत्रण स्थापित रहता हैं. प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतान्त्रिक व्यवस्था में शासन का स्वरूप अस्थायी होता हैं किसी भी राजनीतिक दल का वर्चस्व प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतंत्र में स्थायी रूप से सदैव के लिए स्थापित नही रह सकता हैं। अस्थायी शासन काल ही प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतंत्र की विशेषता हैं, जिसके परिणाम स्वरूप कुलीन वर्ग सदैव चुनाव के माध्यम से राज्य की सत्ता को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। और राज्य की नागरिक रूपी जनता को अपनी और आकर्षित करने का प्रयास कर चुनावी लाभ प्राप्त करने की हर संभव प्रयास करते हैं। प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतंत्र में चुनाव राज्य की शासन व्यवस्था की प्राप्ति के लिए एक अनिवार्य तत्व हैं। चुनाव के माध्यम से ही सत्ता की प्राप्ति लोकतंत्र में संभव हैं और कुलीन वर्ग राजनीतिक सत्ता की प्राप्ति के लिए सदैव प्रयासरत रहते हैं जो एक प्रकार से प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतंत्र को प्रतिस्पर्धात्मक बनाता हैं। प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतंत्र को प्रतिस्पर्धात्मक लोकतंत्र या अप्रत्यक्ष लोकतंत्र के रूप में भी जाना जाता हैं। पश्चमी विचारक जे एस मिल भी प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतंत्र को सबसे उत्तम शासन प्रणाली मानते हैं, क्योंकि इसमें सदैव प्रतिस्पर्धा का वातावरण कायम रहता हैं जो एक प्रकार से लोकतंत्र को स्वच्छ और कुशल बनाता हैं और इसको निरंकुश होने से रोकता हैं।

प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतंत्र में राजनितिक दलो की बहुलता रहती हैं किसी भी लोकतान्त्रिक देश में दलीय व्यवस्था अब अनिवार्य प्रतीत होती हैं क्योंकि राजनीतिक दलो के अभाव में लोकतंत्र को स्थापित किए जाने की कल्पना असंभव हैं। राजनीतिक दल चुनावी प्रतिस्पर्धा के माध्यम से राज्य की सत्ता प्राप्त करते हैं और सदैव सत्ता प्राप्ति के लिए गतिशील रहते हैं। समय के साथ साथ प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतंत्र में भी परिवर्तन आया हैं चुनावी प्रतिस्पर्धा के स्वरूप में भी बदलाव को सरलता से देखा गया हैं जिसमे राजनीतिक परिवर्तन के साथ सामाजिक सांस्कृतिक

और आथिक परिवर्तन भी सम्मिलित हैं। 21वी सदी में भारत भी इस परिवर्तन का साक्षी बना भारतीय राजनीति की चुनावी राजनीतिक में भी अनेक रोचक परिवर्तन देखे गए देश की शासन व्यवस्था पर कई दशको से स्थापित देश की सबसे विशाल और प्राचीन राजनितिक दल काँग्रेस पार्टी राजनीतिक भरष्टाचार और घोटालो के कारण सत्ता से बाहर हो गयी और अन्य दलो को देश के केंद्र की राजनीति और राज्यो की राजनीति में सत्ता प्राप्ति का अवसर प्राप्त हुआ।

भारतीय जनता पार्टी और आम आदमी पार्टी जैसे राजनीतिक दल चुनाव में अनेक समस्याओं और उन समस्याओं के समाधान के साथ चुनावी राजनीति में आए दोनों ही राजनीतिक दलो ने राजनीति भ्रष्टाचार घोटालो महंगाई बेरोजगारी जैसी समस्याओ के विषय पर सत्तावादी काँग्रेस पार्टी की आलोचना की और जनता को राजनीतिक रूप से जागरूक करने का सफल प्रयास किया जिसके परिणामस्वरूप देश की केंद्र और राज्यो में राजनीतिक परिवर्तन सुनिश्चितन हुआ। देश की केन्द्रीय राजनीति में एक लंबे अंतराल के पश्चात् राष्ट्रीय लोकतान्त्रिक गठबंधन के रूप में भारतीय जनता पार्टी की सत्ता में वापसी हुई और दूसरी तरफ अन्ना आंदोलन से निकल कर आई आम आदमी पार्टी को देश की राजधानी दिल्ली की सत्ता प्राप्त हुई। भारतीय जनता पार्टी और आम आदमी पार्टी नें देश की जनता को अनेक वायदे किए, जहा भारतीय जनता पार्टी नें भ्रष्टाचार को चुनावी मुद्दा बनाकर अपने लिए सत्ता वापसी की जमीन तैयार की और जनता को लुभाने के लिए 15 लाख रुपयो का सभी के बैंक खातो में भुगतान का वादा किया तो वही आम आदमी पार्टी नें भी भ्रष्टाचार को चुनावी मुद्दा बनाकर अपने लिए सत्ता की जमीन तैयार की और जनता को लुभाने के लिए मुफ्त पानी, बिजली, शिक्षा, चिकित्सा, आवास, महिलाओ के लिए विशेष मुफ्त बस यात्रा बुजुर्ग पेंशन और तीर्थ यात्रा जैसे वादे चुनावी काल में किए गए। जहां भारतीय जनता पार्टी सत्ता प्राप्ति के पश्चात अपने 15 लाख हर भारतीय के खाते में आएगे के वादे को चुनावी जुमला बताते हुए अपने किए वादे को पूरा करने में असमर्थ दिखी वही राजधानी दिल्ली की राजनीतिक सत्ता में पहली बार आने वाली नव निर्मित पार्टी आम आदमी पार्टी नें अपने सभी चुनावी वादो को पूरा किया और देश की राजनीति में एक नए अध्याए की शुरुआत की जिसको एक प्रकार से "रेबड़ी कल्चर" की संज्ञा दी जाने लगी जिसने मुफ्त की राजनीति को अपनी और आकर्षित किया और इस प्रकार की राजनीति नें चुनावी परिस्थिति को विशेष रूप से प्रभावित किया। देश की चुनावी राजनीति में "रेबड़ी कल्चर" नें अपना प्रभाव दिखाना आरंभ किया लगभग सभी राजनीतिक दलो नें "रेबड़ी कल्चर" के माध्यम से सत्ता प्राप्ति का प्रयास किया। श्चेत्रीय से लेकर राष्ट्रीय राजनीतिक दलो नें जनता को मुफ्त के वादे कर जनता को कुछ ना कुछ मुफ्त वितरण किया जिससे कि जनता इनके प्रति आकर्षित रहे।

भारत देश के अनेक राज्यो में "रेबड़ी कल्चर" की झलक देखी जा सकती हैं जहां उत्तर प्रदेश राज्य की राजनीति में कायम समाजवादी पार्टी के अध्यक्ष और उस समय के मुख्यमंत्री श्री अखिलेश यादव नें छात्र और छात्राओ के लिए साइकल और लैपटाप मुफ्त में दिये द्य बिहार के मुख्यमंत्री श्री नितीश कुमार यादव नें भी मुफ्त में साइकल वितरण की ठीक इसी प्रकार देश के अन्य राज्यो की सरकारो नें भी यह मुफ्त वितरण का जनकल्याणकारी कार्य किया।

भारतीय राजनीति में मुफ्त उपहार रूपी "रेबड़ी कल्चर" वर्ष 2014 के लोकसभा चुनाव से पहले तक काफी सीमित थे किसी राज्य सरकार की योजना के अंतर्गत मुफ्त उपहार सीमित रूप से वितरित किए जाते थे किन्तु वर्ष 2014 के लोकसभा चुनाव के दौरान भारतीय राजनीति में मुफ्त उपहार रूपी रेबड़ी कल्चर अपनी चरम सीमा पर नजर आई, चुनावी राजनीति में प्रत्येक राजनीतिक दल अपने चुनावी रेली,चुनावी भाषणो और वादो में मुफ्त उपहार के माध्यम से जनता को अपनी और आकर्षित करने लगे जिसमे हर भारतीय के बैंक खाते में 15 लाख रुपैया से लेकर किसान के कर्ज माफी , मुफ्त राशन बिजली, पानी, तीथ यात्रा, शिक्षा, स्वास्थ, मोबाइल फोन लैपटाप और स्कूटी साइकल जैसे मुफ्त उपहारो के वादे किए गए जिसको रेबड़ी कल्चर की संज्ञा प्रदान की गयी। वर्ष 2019 के लोकसभा चुनावो और राजधानी दिल्ली के विधानसभा चुनावो में भी मुफ्त उपहारो का बोलबाला रहा ओर सभी राजनीतिक दल इस मुफ्त उपहार रूपी रेबड़ी कल्चर के माध्यम से जनता को अपनी और आकर्षित करने में लगे रहे और भारतीय जनता पार्टी और आम आदमी पार्टी मुफ्त उपहारो के वादे करने में सबसे आगे नजर आए। आम आदमी पार्टी अपने काम और अपने मुफ्त उपहारो के वादे के दम पर दिल्ली और पंजाब राज्य में सरकार बनाने में बहुमत के साथ सफल रही और अपनी जीत शुनिश्चित करने के लिए जनता को मुफ्त उपहारो को आगे भी लागू रखने का आश्वासन भी गारंटी कार्ड के माध्यम से दिया। मुफ्त उपहार रूपी रेबड़ी कल्चर का जहा आम आदमी पार्टी नें जन कल्याण की दृष्टि से समर्थन किया तो वही भारतीय जनता पार्टी नें मुफ्त उपहार रूपी रेबड़ी कल्चर के विरुद्ध अभियान चलाकर आम आदमी पार्टी की इस नीति का विरोध किया और जनता को आत्मनिर्भर बनाने पर बल दिया ताकि मुफ्त उपहार रूपी रेबड़ी कल्चर से जो कर्ज का बोझ देश और राज्यो पर बढ़ रहा हैं वह कम हो सके।

तथापि मुफ्त उपहार रूपी रेबड़ी कल्चर के समर्थन और विरोध में सभी राजनीतिक दलो के अपने अपने वैचारिक तर्क है जो इस विषय को चर्चा योग्य बनाते हैं परंतु इस मुफ्त उपहार रूपी रेबड़ी कल्चर नें भारत देश की राजनीति में एक नए चुनावी विषय को जन्म दिया हैं और मुफ्त उपहार रूपी रेबड़ी कल्चर नें भारतीय राजनीति में परिवर्तन को भी कायम किया हैं। मुफ्त उपहार रूपी रेबड़ी कल्चर का प्रभाव देश की राजनीति, मतदाता के व्यवहार में अहम भूमिका अदा करता हैं, यह मतदाता को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कर राजनीतिक दलो की विजयी शुनिश्चित करने में अहम

भूमिका निभाता हैं इसलिए आम आदमी पार्टी और अन्य राजनीतिक दल इस मुफ्त उपहार रूपी रेबड़ी कल्चर को कायम रखने की वकालत करते नजर आते हैं।

संदर्भ सूची

- https://www-drishtiias-com/hindi/daily&news&editorials/freebies&in&election
- https://www-drishtiias-com/hindi/daily&updates/daily&news&editorials/freebies&vs&welfare
- https://navbharattimes-indiatimes-com/india/freebies&announcement&during&election&in&india&all&you&need&to&know/articleshow/93337518-cms
- https://www-livehindustan-com/national/story&freebies&aap&reaches&supreme&court&election&commission&of&india&pil&6913169-html

♦♦♦♦♦

5

आदिवासी जनजातिः लोकलुभावनवादी नीति और राजनीति

डॉ. चित्रा राजौरा

शोधार्थी, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

इक्कीसवीं शताब्दी ने राजनीति में विभिन्न परिवर्तन देखे हैं। कई अवधारणाओं और सिद्धांतों को स्वीकार कर लिया गया था, जिन पर प्रश्न उठाया जा रहा है। उदार लोकतांत्रिक विश्व व्यवस्था लोकलुभावनवाद के भूत से तेजी से परिवर्तित हो गई है। लोकलुभावनवाद जो चुनाव अभियानों में चला गया था, अब दशक का शब्द बन गया है क्योंकि हम देखते हैं कि कई लोकलुभावन नेता कई देशों में सरकारी सत्ता संभाल रहे हैं। लोकलुभावन दलों और सामाजिक आंदोलनों का नेतृत्व सामान्यतया करिश्माई या प्रभावशाली नेताओं द्वारा किया जाता है जो स्वयं को ष्लोगों की आवाजष् के रूप में प्रस्तुत करते हैं। यह शब्द 'करिश्माई नेता' वैचारिक दृष्टिकोण के अनुसार, लोकलुभावनवाद को प्राय अन्य विचारधाराओं के साथ जोड़ा जाता है, जैसे कि राष्ट्रवाद, उदारवाद, या समाजवाद। इस प्रकार, प्रसिद्ध परिभाषा राजनीतिक वैज्ञानिक अर्नेस्टो लैक्लाऊ द्वारा दी गयी है। उनके अनुसार "यह वंचितों एवं हासिये पर पड़े लोगो का एक वर्चस्व संगठन है जिसमे विभिन्न असंबंधित मांगो के आधार पर एक समानधर्मा संयोजन कर रचना की जाती है."

वर्तमान में लोकतांत्रिक देश में लोकलुभावनवादी राजनीति का बोलबाला है. ऐसा समय आ गया है कि प्रत्येक पार्टी के सदस्य अपने शक्ति को स्थिर रखने और शक्ति में बने रहने के लिए अनेक दवपेंच अपनाते है। इसी में सबसे महत्वपूर्ण हथियार लोकलुभावन दावों की घोषणा करना जो नागरिको के हितो में भी होता है नेता के भी। इस प्रकार व्यक्तिगत हित में देखा जाये तो नागरिको को राजनीति में विशेष रूचि नहीं होती है और इस व्यवहार से नागरिक अपने हितो और इच्छाओ को पूर्ण करने के लिए लोकलुभावन वादों में आकार पार्टी का सहयोग करते है. यह प्रवृति व्यक्तिगत भावना और हित से प्रेरित होती है। इसलिए यह लोकतांत्रिक शासन का अर्थ बदलकर 'हितकारी शासन' में परिवर्तित हो गया है। जहां पर नागरिक और राजनेता अपने–अपने हित पूर्ण करते है.

इसी प्रकार, इस लेख में आदिवासी जनजाति को ध्यान में रखकर लोकलुभावन नीति और राजनीति का अध्ययन किया गया है। आदिवासी जनजाति के समक्ष राजनीति पहचान का संकट और अस्मित्ता

का संकट बना रहता है। उत्तर पूर्वी भारत से लेकर झारखंड, छत्तीसगढ़, एवं ओडिसा तक के मध्य भारत में अलग–अलग प्रकार के आदिवासी अस्मितापरक अभिव्यक्तियां रही है. गुजरात, केरल, महाराष्ट्र, तमिलनाडु तक फैले इस बहुस्वरी अस्मिताओं का संसाधन को लेकर उनकी मांगो में संसाधनों के न्यायपूर्ण वितरण की धारणा बलवती रही है। इस बात का लाभ राजनेता और राजनीति दलों को मिलता है। इसलिए राजनीतिक नेता और राजनीति दल भारतीय आदिवासियों के समक्ष अपने राजनीतिक हितपूर्ण करने के लिए उनकी भावनाओं को टारगेट बनाते हुए लोकलुभावन राजनीति का उपयोग करते है। या यूं कहे राजनेता अपनी करिश्माई राजनीतिक नेतृत्व पर आधारित लोकलुभावनवाद राजनीति का एक उत्तम उदारण प्रस्तुत करते है। इसी संदर्भ, में सरकार प्रायोजित लोकलुभावनवाद जनतांत्रिक मांगो को अभिशासन के तर्को के साथ समाहित और व्यवहारिक धरातल पर उसका उपयोग में लाता है।

भारतीय समाज में विभिन्न जनजातियों का अस्तित्व हमारी सांस्कृतिक विरासत है। आधुनिक युग की खोज उपभोक्तावाद पर आधारित है। किन्तु आदिम जनजातियों का आदिम इतिहास के संदर्भ में अध्ययन करना भी आधुनिक समाज की आवश्यकता है। ये आदिम आदिवासी जनजातियाँ जंगलों में रहती हैं, जंगल ही इनका जीवन हैं और आधुनिकता की चकाचौंध से कोसों दूर हैं। कभी–कभी ऐसा लगता है कि यह जनजाति अपने जंगली वातावरण में जीवन जीने के लिए बनी है। सदियों से पिछड़ी यह आदिम जनजाति आज आधुनिकता की दौड़ से बहुत दूर है। इन जनजातियों के आर्थिक, सामाजिक विकास के साथ–साथ राजनीतिक विकास आवश्यक हो गया है। इन जनजातियों को आधुनिक समाज से राजनीतिक रूप से जोड़ने के लिए कई संवैधानिक प्रावधान भी किए गए हैं।

आदिवासी जनजाति की केंद्रीय सरकार और राज्य सरकार से सीधा सम्बन्ध नहीं होता है। जिसके कारण आदिवासी जनजाति को अपने राजनीतिक, सामाजिक, और आर्थिक विकास के साथ– साथ अपने समाज के पहचान और वैधता नहीं मिल पायी है। वर्तमान में ऐसी अनेक आदिवासी जनजाति है। जैसे आंध्र प्रदेश के अनेक वनवासी जनजाति में कोया, कोंडा, कोलम्स, चेंचस, और कोंडा रेड्डी थोटी है। इसी प्रकार भारत में भारत के पूर उत्तर पूर्वी क्षेत्र में प्रायरू पाए जाने वाले प्रमुख जनजातियों में से कुछ प्रमुख हैं जैसे कि गारो जनजाति के आदिवासी समूह, खासी जनजाति, जयंतिया जनजाति, आदि जनजाति, अपातानी जनजाति, अरुणाचल प्रदेश में, कुकी जनजाति, बोडो जनजाति और असम में देवरी जनजाति जो बिखरे हुए हैं।

भारत में चुनाव होने के समय अपने वोटो बैंक को सुदृढ़ करने के लिए अलग–अलग राजनीतिक दलों द्वारा शासित केंद्रीय और प्रांतीय शासन व्यवस्था के नीति कार्यक्रमों को देखना पड़ता है।

हाल ही में, भारत के मुख्य न्यायाधीश एन वी रमण की अगुवाई वाली पीठ ने लोकलुभावन वादों या मुफ्त में दिए जाने वाले सामान तथा लोककल्याण के मध्य अंतर करने को कहा, अतः इसका अर्थ यह है कि राजनीतिक दलों द्वारा लोककल्याण और मुफ्त स्कीम को जोड़ दिया जाता है जिसका प्रभाव राज्य वित्तीय बजट पर पड़ता है जो कि एक गंभीर विषय है. यह वाद–विवाद का विषय बना हुआ है।

यद्यपि हम आदिवासी जनजाति के प्रति दलों की प्रवृति को देखे तो यह राजनीतिक वोट बैंक एक अहम बिंदु है जिसके कारण दलों की सत्ता में परिवर्तन हो सकता है। इसलिए आदिवासियों के हितों और कल्याण के लिए केंद्र सरकार और प्रांतीय सरकार लोकलुभावन वादे करती आयी है। जैसे ही विधानसभा चुनाव की शुरुआत होती है मुख्य दल अपने मतदाताओं के लिए लंबे– चौड़े वायदों वाला चुनाव घोषणा पत्र जारी करती है। आरबीआई की रिपोर्ट के अनुसार, पंजाब के पश्चात आंध्र प्रदेश देश में ष्मुफ्त उपहारष् पर पैसा खर्च करने के मामले में दूसरे स्थान पर है।

झारखंड में वर्ष के अंत में होने वाले विधानसभा चुनावों पर नजर रखते हुए नेता अपने पारंपरिक वोट बैंक को लुभाने के लिए हर संभव कदम उठा रहे हैं। झारखण्ड के विधायक, चंपई ने कहा, ष्बिहार, बंगाल आर ओडिशा के बाहरी लोगों को इन कंपनियों में रोजगार मिल रहा है और हमारे आदिवासी और मूलवासी भाई–बहन बेरोजगार रह गए हैं।ष् चंपाई ने पड़ोसी राज्य ओडिशा का उदाहरण दिया जहां कई कंपनियां केवल स्थानीय लोगों को नौकरी देती हैं, और कहा कि इस तरह की पहल को यहां भी अपनाया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि झारखंड में केवल आदिवासियों और मूलवासियों के लिए नौकरी आगामी चुनावों में उनके मुख्य मुद्दों में से एक होगी। उन्होंने कहा कि राज्य का श्जल (पानी), जंगल, श्जामिनश (जमीन) आदिवासियों का ही है। इसका अर्थ है कि सरकार केवल सीमित स्तर पर ही लोगो को लुभाकर अपना उदेश्य पूर्ण करते है। इसका अर्थ है कि आंध्र प्रदेश में कुछ ऐसे आदिवासी समुदाय है जिनको अभी तक मताधिकार नहीं मिला है। विकास की सर्वगीण पठकथा में आदिवासी हितों को सबसे अंत में डाल दिया जाता है। परिणामतरू उनको सीमांत कर दिया जाता है।

आदिवासियों को केवल लुभावनी बातो में 'एक वोट बैंक की राजनीति' का रूप दे दिया जाता है। जैसे कि बी जे पी नेता अमित शाह द्वारा अपने भाषण में कहा गया कि जब से मोदी सरकार ने सत्ता संभाली है, तब से आदिवासी लोगों के जीवन में परिवर्तन आया है और यह सुनिश्चित करते हैं कि उन्हें सरकारी कल्याणकारी योजनाओं का लाभ मिले। कोंग्रेस दल पर आरोप लगया स्वतंत्रता के पश्चात से 70 वर्षों में कांग्रेस द्वारा वोट बैंक के रूप में प्रयोग किया गया था। दलों ने आदिवासियों के कल्याण के लिए कुछ नहीं किया। जब भी भाजपा सत्ता में आई, उसने आदिवासियों

के लिए कई विकास योजनाएं शुरू कीं। गृह मंत्री ने कहा कि केंद्रीय आदिवासी मामलों का मंत्रालय तब अस्तित्व में आया जब भाजपा के अटल वाजपेयी प्रधानमंत्री थे और आदिवासियों को मुफ्त घर, रसोई गैस आपूर्ति, बिजली कनेक्शन के लिए मोदी सरकार की कल्याणकारी योजनाओं का सबसे बड़ा लाभ हुआ है। उन्होंने कहा, कांग्रेस ने आदिवासियों को अंधेरा, अशिक्षा और गरीबी दी। मोदी सरकार ने पांच साल में आदिवासियों को बिजली, शिक्षा, मुफ्त घर, मुफ्त गैस दी है। शाह ने कांग्रेस के इस दावे के लिए भी फटकार लगाई कि देश के संसाधनों पर लोगों के एक खास वर्ग का पहला अधिकार है। गृह मंत्री ने आदिवासी प्रतीक को प्यार से याद करते हुए कहा कि देश आदिवासियों को उनका अधिकार देने के लिए अंग्रेजों के विरुद्ध उनकी लड़ाई को नहीं भुलाया जा सकता। उन्होंने वनों और पर्यावरण की सुरक्षा में उनके योगदान के लिए आदिवासियों की भी प्रशंसा की। यही नहीं उत्तर पूर्वी भारत में भाजपा को अप्रत्यासित सफलता यह बात रेखांकित करती है कि इन क्षेत्रो में आदिवासी समाजों के मध्य भाजपा अपना वैचारिक विस्तार अनवरत कर रही है। क्षेत्रीय स्थानीय अस्मिताओं को समर्थन एवं गठजोड़ बनाकर भाजपा ने उन समूहों पर अपना प्रभाव जमाया है, इसका उद्धरण असम और त्रिपुरा है। पश्चिम बंगाल में राज्य प्रायोजित लोकलुभावनवाद को बिहार एवं उड़ीसा जैसे राज्यों से तुलना कर सकते है या राष्ट्रीय स्तर पर मोदीत्व का उभार या तमिलनाडु जैसे राज्य में इसका दूसरा रूप समाने आता है।

लोकलुभावनवादी राजनीति एक प्रकार से राजनीतिक दलों और नेताओ की कमजोरी और सत्ता के भय को दर्शाता है। जिसके कारण वे नागरिको की मूल भवनों को निशाना बनाकर अपने चुनाव घोषणपत्र में सम्मिलित करते है। व्यवहारिक स्तर पर देखा जाए तो नागरिक अपने सीमित लाभ को ही प्राथमिकता देते है, किन्तु वे यह भूल जाते है कि उनकी इस प्रकार की गतिविधि देश के शासन को भ्रष्ट बनाने एक अहम भूमिका निभाती है। यह विचार आदिवासी लोगों पर लागू होता है। दलों द्वारा लोकलुभावन नेतृत्व द्वारा अपनी सत्ता को चुनावी वैधता प्रदान की जाती है। ताकि जनता की अंतरतम भावनाओं के सच्चे एकमात्र वैध प्रतिनिधि के रूप में अपनी दावेदारी को मजबूत किया जा सकते।

♦♦♦♦♦

सी जी एस

वैश्विक अध्ययन केंद्र

अकादमिक अनुसंधान केंद्र भवन

गुरु तेग बहादुर मार्ग

दिल्ली विश्वविद्यालय

दिल्ली– 110007

www.cgs.du.ac.in @cgsofficialdu office@cgs.du.ac.in +91-11-27666281